Quest Journals
Journal of Research in Humanities and Social Science
Volume 5 ~ Issue 9 (2017)pp: 47-51
ISSN(Online):2321-9467
www.questjournals.org

Research Paper

जयपुर राज्य के कछवाहा शासक

श्रीमती सुशीला सांविरया
व्याख्याता–इतिहास
श्राजकीय लाल बहादुर शास्त्री
स्नाकोत्तर महाविद्यालय, कोटपूतली।

जयपुर राजस्थान के उत्तर पश्चिम व पूर्व में स्थित हैं। 1727 ई दृमें महाराणा सवाई जयसिंह ने जयपुर नगर की स्थापना की। इससे पहले यह आमेर (आम्बेर) राज्य कहलाता था। 1200 ई. के लगभग कांकिलदेव ने आमेर नाम इस नगर को बसाया उससे भी पहले यह राज्य ढूढांड कहलाता था। कर्नलटॉड ने ढूढांड नाम जोबनेर के पास ढूढ नामक पहाड़ी के कारण बतलाया है।
पृथ्वीसिंह मेहता ने यह नाम जयपुर के पास आमेर की पहाड़ियों से निकले वाली धुंध नदी के नाम से बताया है।
धुन्ध नदी का नाम इस क्षेत्रा में धुन्ध नामक किसी अत्याचारी पुरूष्ज्ञ के नाम के कारण पड़ज्ञ जो इस क्षेत्रा में रहता था। अतः बहुत संभव है िकइस नदी के नाम से ही यह क्षेत्रा ढूढाड कहलाया है।
महाभारत के समय यह मत्यस्य प्रदेश का एक भाग था। उस वक्त इसकी राजधानी बैराठ थी। जो अब एक छोटा कस्बा है। यहाँ सम्राट अशोक के समय का एक शिलालेख मिला है।
मनु ने इस प्रदेश को ब्रह्मर्षि देश के अंतर्गत माना है।

कछवाहों की उत्पत्ति का मूल स्थान

कछवाहा कुलके राजपूत अपने को अयोध्या सम्राट भगवान रामचंद्र के पुत्रा कुश के वंशज होना मानते है।
कर्नल टॉड ने इन्हें के वंशज होने के कुशवाहा नाम पडना और बाद में बिगडकर कछवाहा हो जाना बताया है। किसी भी प्राचीन लेख में इनको कुशवाहा नहीं लिखा गया है वरन् इन्हें कच्छपघात या कच्छपारि ही लिखा गया है।
जनरल कनिघंम ने लिखा है कि कछवाहों की कुश से उत्पत्ति बतलाना भाटों द्वारा गढ़ गई बात है। जिन्होंने कछवाहा व कुश शब्द ही समानता देखकर उस धारणा को जन्म दिया।
ग्वालियर और नरवर के कछवाहा राजाओं के कुछ संस्कृत शिलालेख ने उन्हें कच्छपघात या कच्छपारि लिखा है। जो प्राकृत में कछपारि और फिर सामान्य बोलचाल में कछवाहा हो गया।
बेडन पावल – ने लिखा है कि कछवाहें वास्तव में विंध्याचल के पहाड़ी भाग से आये। इनका कुश के साथा कोई संबंध नहीं था।
पं. राधाकृष्ण–इन्हें मनु के पुत्रा इक्ष्वाकु के वंशज होने से पहले ऐक्ष्वाक और बाद में बिगड़कर कछवाक और कछवाहा हो जाना बताया है।
कछवाहां की कुल देवी कछवाही (कच्छवाहिनी) थी। अतः इसी कारण इनका नाम कछवाहा हो जाना संभव है।
महाकवि सूर्यमल मिश्रण का मतह ै कि कुश के वंशज कत्सवाध नामक राजा के कारण इनका नाम कछवाहा पड़ा। कत्सवाध राजा के पिता का नाम कुर्म था जिससे कछवाहे कुर्मा व कुर्म भी कहलाते है।
जयपुर के राजाओं के कुछ शिलालेखों (मानसिंह वि. सं. 1658 सांगानेर, रायसाल–आदिनाथ मंदिर, लीली अलवर राज्य वि. सं. 1803) में अपने को कुर्मवंशी लिखा है।
पृथ्वीराज रासों ने भी आमेर के राजा पुज्जुन (पंजनदेव) को कुर्म लिखा है। अतः कुर्म व कछवाहा एक ही जाति है।

महाभारत में नागवंशी कच्छप जाति का क्षत्रियों से युद्ध होने का विवरण मिलता है। (महा आदिपर्व श्लोक 71) नागों का राज्य ग्वालियर के आसपास था। इनकी राजधानी पदमावती थी। जो अब नरवर कहलाती है। इस क्षेत्रा में बहने वाली उत्तर सिंध व पाहूज के बीच का क्षेत्रा अभीभ्झी कछवाहाधार कहलाता है। कहा जाता है कि कछवाहों के पूर्वज अयोध्या छोड़ने के बाद रोहतासगढ़ और वहाँ से नरवर चले गये। नरवर में आकर कच्छपों से युद्ध कर उन्हें हराया और इसी कारण ये कच्छपारि, कच्छपघात, कच्छपहन या कच्छपहा कहलाये हो। यही शब्द बाद में बिगड़कर अब कछवाहा कहलाने लगा हों।

कछवाहा शासक–कछवाहों के आदि स्थान से संबंधी समस्या का अभी तक पूर्ण समाधान नहीं हो सका है। किन्तु सामान्यतः यह माना जाता है कि 12वीं शताब्दी में ग्वालियर के शासक सोढ़देव के पुत्रा दूलहराय जिनका असली नाम तेजकरण था ने दौसा में देवती के बडगुर्जर क्षत्रियों को पराजित कर उनके क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। दूलहराय का विवाह मोरा के चौहान राजा रल्हनसी की पुत्रा से हुआ था। चौहानों (ससुराल पक्ष) की सहायता से उसने मीणों को परास्त कर मांची रामगढ़, खोह, झोटवाडा और गेटोर पर अधिकार कर लिया। कछवाहों का राज्य ढूढा में स्थापित करने वाला दूलहराय ही था। प्रथम शासक के नाम दूलह से ही दूल–दूड, ढूढाड़ हो गया। पं. गोपाल नारायण जी बेहारा ने भी दूलहराय को कछवाहा राज्य का वास्तविक संस्थापक बताया है। दूलहराय की मृत्यु के बाद उसका पुत्रा कांकिल देव 1070 ई. में राजा बना। वह अपने पिता की तरह वीर, साहसी था। उसने सुसावटा मीणों के मुखिया भत्तों से आमेर जीत कर उसे अपने राज्य की राजधानी बनाया वीर विनोद में भी उल्लेख है कि कांकिल जी ने जमवाय माता के आदेश से मीणों को मारकर अम्बिकापुर की नींव डाली। इसने यादव राजपूतों से मेड, बैराठ जीत कर अपने राज्य में मिला लिया तथा पहाड़ पर कांकिलगढ़ नामक किला बनवाया।

कांकिल देव के बाद हणुदेव फिर जान्हडदेव राजा बने जिनका अधिकांश समय मीणों से युद्ध करने में निकला। जान्हडदेव की मृत्यु के बाद उनका पुत्रा पजवनदेव (प्रद्यम्नराय, पजवनराय) शासक बना। इसका विवाह पृथ्वीराज चौहान के चाचा कान्हजी की पुत्रा से हुआ था। पजवनदेव चौहानों का सेनापति था। चन्दरवरदाई ने पृथ्वीराज रासों में उसकी वीरता, रणकौशल, बुद्धिमता और चातुर्य का बखान किया है। इसने पृथ्वीराज चौहान के अधिकांश युद्धों, गुजरात, महोबा, बुन्देलखण्ड, तराइन के प्रथम युद्ध (1191 ई.) में भाग लिया और विजय रहा किन्तु जयचंद के साथ हुए युद्ध में वह अपने भाईयों और दो पुत्राों के साथ वीरगति को प्राप्त हुआ।

ख्यातों में इस वंश के मालसी, जिलदेव, रामदेव, कुंतल, जणसी, उदयकरण, नृसिंह औश्र चन्द्रसेन के नामों का उल्लेख मिलता है।

चन्द्रसेन के पुत्रा पृथ्वीराज का आमेर के कछवाहा वंश में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है। इसने महाराणा सांगा के साथ खानवा में बाबर के विरुद्ध युद्ध में भाग लिया। वे परम हरिभक्त, प्रजावत्सल एवं सात्विक व धार्मिक प्रवृत्ति के नरेश थे। इसीलिए इतिहासकार मुंशी देवी प्रसाद ने लिखा है कि महाराजा पृथ्वीराज जी का जितना हाल भगवान के भक्तों में मिलता है, उतना राजाओं के इतिहास में नहीं मिलता। इनकी नौ रानियों से 19 पुत्रा और तीन पुत्रियाँ हुई इनमें से 12 पुत्राों को जयपुर राज्य की सर्वोच्च जागीरें दी गई। जो जनमानस में 12 कोटडी के नाम से प्रसिद्ध हुए। खानवा के युद्ध में लगे घावों के कारण उनकी कुछ समय बाद मृत्यु हो गई।

पृथ्वीराज के बाद पूरणमल (1527–34 ई.) सिंहासनारूढ़ हुआ परंतु भीमदेव (पृथ्वीराज का ज्येष्ठ पुत्रा 1534–37 ई.) ने पूरणमल को पराजित कर आमेर पर अधिकार कर लिया। किन्तु हुमायूं के भाई हिन्दाल से युद्ध करता हुआ वह मारा गया। उसका उत्तराधिकारी रतनसिंह अयोग्य और ऐययाश प्रवृत्ति का था। उसने शेरशाह सूरी की अधिनता स्वीकार कर ली। अव्यवस्था का लाभ उठाकर रतनसिंह के चाचा सांगा ने आमेर की काफी भूमि पर अधिकार कर सांगानेर की स्थापना की। उसके सौतेले भाई आसकरण ने रतनसिंह की जहर देखकर हत्या (1548 ई.) कर दी और स्वयं आमेर का राजा बन गया। उसका शासन मात्र 16 दिन चला उसी के सामन्तों ने उसे गद्दी से उतार कर भारमल (1548 ई.) को आमेर के राजसिंहासन पर बिठा दिया। भारमल राजनीतिक दाव पेच में माहिर था।

भारमल (1548–74 ई.) पृथ्वीराज का चौथ पुत्रा था। कई लेखकों ने उसे बहरमल व बिहारीमल लिखा है।

आसकरण ने शेरशाह शूर के पुत्रा सलीमशाह के सरदार हाजीखां पठान की सहायता से आमेर पर आक्रमण कर दिया। किन्तु भारमल ने उसे धन देकर अपनी और मिला लिया और आसकरण को नरवर का राज्य दिला दिया। जब हाजीखां ने हुमायूं के सरदार मजनूखां को घेर लिया तथा भारमल ने घेरा उठवा दिया इससे मजनूखां भी भारमल का मित्रा बन गया। इसी ने बादशाह अकबर से भारमल का परिचय करवाया। इस समय आमेर की स्थिति अच्छी नहीं थी। मीणा सरदार उत्पाच मचा रहे थे। पूरणमल के पुत्रा सूजा ने मेवात सरदार मिर्जा सर्फुदीन की सहायता से अपना अधिकार बताते हुए हमला कर दिया। भारमल स्वयं पहाड़ों में जा छिपऔर मुगलों से सहायता लेने का प्रयास करने लगा। चारों ओर से मंडराती मुसीबतों से छुटकारा पाने के प्रयत्नों में वह ख्वाजा साहब की जियारत करने आये मुगल सम्राट अकबर से सांगानेर में मिला और उसकी अधिनता स्वीकार कर ली। मुगल साम्राज्य की नींव पक्की करने के लिए अकबर को भी शक्तिशाली व विश्वास पात्रा सहयोगियों की आवश्यकता थी। भारमल ने अपनी पुत्राी राजकुमारी हररखा का विवाह अकबर से करने का प्रस्ताव रखा जिसे बादशाह ने स्वीकार कर लिया। 6 फरवरी 1562 को अजमेर से लौटते हुए सांभर में विवाह संपन्न हुआ। बादशाह की यह बेगम मरियम जमानी कहलाई। दोनों में संबंध स्थापित हुआ जो उस समय दोनों के लिए समान हितकर था। अकबर ने भारमल को 5000 सरदार व जात का मनसब, अमीर उल उमरा और राजा की उपाधियाँ प्रदान की। अकबर की सहायता पाकर भारमल बहुत शक्तिशाली हो गया उसने मीणों को हराकर उनके नाहण कस्बा को नष्ट कर लवाण बसाया। 1574 ई. में भारमल की मृत्यु के बाद उसका पुत्रा भगवानदास आमेर का राजा बना जो बहुत योग्य सिद्ध हुआ। अपने पिता के जीवनकाल (1562 ई.) में ही वह मुगल दरबार में नियुक्त हो गया था। यह मुगल साम्राज्य का कर्ताधर्ता था। इसने गुजरात, लाहौर, चित्तौड, रणथम्भौर, इडर, मेवाड आदि के साथ युद्ध और पठानों तथा पंजाब के पहाड़ी राज्यों का दमन किया। सात वर्ष तक उसने कुशलता पूर्वक पंजाब की सुबेदारी संभाली। 13 फरवरी 1585 में उसने अपनी पुत्राी मानबाई का विवाह शहजादा सलीम के साथ किया जिससे 1587 ई. में शहजादा खुसरो का जन्म हुआ। वह बादशाह का बहुत विश्वास पात्रा था। 1589 ई. में भगवानदास की मृत्यु के बाद मानसिंह आमेर का राजा बना। गद्दी पर बैठते ही बादशाह अकबर ने राजा की पदवी, खिलकत, फरमान व बहुमूल्य उपहार भेजे आमेर के राजाओं में यह बहुत ही प्रसिद्ध व प्रतापी राजा हुआ। मानसिंह ने अपने दादा भारमल (1562–74 ई.) पिता भगवानदास (1574–89 ई.) के साथ और आमेर के शासक (1589–1614 ई.) के रूप में लगभग 67 महत्वपूर्ण युद्धों में (हल्दीघाटी 1576 ई.) भाग लियाऔर विजयी रहा। बंगाल, बिहार और उड़ीसा के सूबेदार के रूप में विद्रोहियों का दमन कर वहाँ शांति स्थापित की। सम्राट अकबर के योग्य सेनानायकों और नौ रत्नों में मानसिंह का महत्वपूर्ण स्थान था। उसकी बहुमूल्य सेवा से प्रसन्न होकर बादशाह ने उसे 1000 मोहरे, 120000 रू. पुरस्कार और 7000 जात व 6000 सवार का मनसब प्रदान किया। इतनी बड़ी मनसब अभी तक अपने भाई मिर्जा अजीज कोका के अलावा किसी को नहीं दी थी।

मानसिंह के पश्चात भाव सिंह (1614–21 ई.) आमेर का शासक बना वह जहांगीर का विशेष कृपा पात्रा था किन्तु नशे की लत के कारण अधिक जीवित न रह सका।

भावसिंह की मृत्यु के बाद 1621 ई. में मिर्जा राजा जयसिंह आमेर का शासक बना। इसके आगमन से जयपुर राज्य के इतिहास में समृद्धि और यश का स्वर्ण युग प्रारंभ हुआ। महाराजा मानसिंह के बाद आमेर राज्य के प्रथम श्रेणी के राज्यों में रखने का गौरव इसको ही था। मुगलों के अधीन मध्य एशिया में बलख से लेकर दक्षिण भारत में बीजापुर तक अपनी वीरता का परिचय दिया। बादशाह ने उसे मिर्जा राजा की पदवी दी। यह पद्वी इसके पहले मानसिंह को अकबर ने दी थी। मिर्जा राजा जयसिंह का जीवनवृत्त जहांगीर के अंतिम सात वर्ष, शाहजहाँ का पूरा शासनकाल और औरंगजेब के प्रारंभिक दस वर्षों का पूरा इतिहास है। उसने मराठों (शिवाजी) पर शाही नियंत्रण करने के अनेक प्रयास किये। किन्तु उस पर शिवाजी को आगरा के किले में सहायता करने का आरोप लगा, जिससे बादशाह का उस पर से विश्वास उठ गया साथ ही जयसिंह बीजापुर को विजीत नहीं कर सका। जयसिंह का घोर अपमान हुआ जिसे वह सहन नहीं कर सका। जयसिंह का घोर अपमान हुआ जिसे वह सहन नहीं कर सका और रास्ते में ही बुरहानपुर में 1667 ई. को इस संसार से चल बसा।

मिर्जा राजा जयसिंह की मृत्यु के बाद रामसिंह आमेर की गद्दी पर बैठा वह एक वीर व वचनपालक राजा था। किन्तु वह उतनी ख्याति नहीं पा सका जो उसके पिता ने पाई थी। मुगल दरबार में उसका उतना सम्मान व प्रभाव नहीं था। रामसिंह के बाद बिशन सिंह (1689–1700) आमेर का शासक बना काबुल में उसकी मृत्यु होने पर सवाई जयसिंह उसका उत्तराधिकारी बना। उसके समय में जयपुर राज्य की जितनी उन्नति हुई उतनी राजा मानसिंह या मिर्जा राजा जयसिंह के समय में भी नहीं हो पायी थी। उनमें प्रतिभा थी और वह अवसर का लाभ उठाना भी जानता था। प्रारंभ में इसका नाम विजयसिंह व छोटे भाई का नाम जयसिंह था। लेकिन औरगंजेब ने इसकी वीरता और वाकचातुर्य को मिर्जा राजा जयसिंह से बढ़कर (सवाया) आक कर इसका नाम सवाई जयसिंह रख दिया और उसके छोटे भाई का नाम विजयसिंह कर दिया।

सवाई जयसिंह का काल औरंगजेब के अंतिम दिनों से लेकर नादिरशाह की दिल्ली लूट तक का है। योग्य शासक, सेनानायक, योद्धा, विद्वान, साहित्य संरक्षक तथा ज्योतिष गणित के ज्ञाता के रूप में जयसिंह अ‚तीय था। कठिन परिस्थितियों में सत्ता संभाल कर भी अपनी व्यक्तिगत योग्यता से सभी समस्याओं का समाधान किया और आमेर के यश व गौरव में वृद्धि की। बादशाह औरंगजेब भी जयसिंह की वीरता और शौर्य की प्रशंसा करते थे। अपनी व्यक्तिगत वीरता व योग्यता के बल पर वह तीन बार मालवा का सुबेदार नियुक्त हुआ।

सवाई जयसिंह हिन्दू धर्म व संस्कृति का बड़ा रक्षक था। उसने बादशाह से कहकर जजिया कर (1770 ई.) हटवाया। वह ह्रदय से चाहता था। कि भारत से मुस्लिम राज्य का पतन हो जाये। प्राचीन भारतीय परम्परा के प्रशासनिक ढांचे को भी संगठित किया और उसकी सीमा में वृद्धि की। आमेर के स्थान पर नई राजधानी जयुपर (18 नवम्बर 1727) बसायी। जिसकी स्थापना एक सोची समझी योजना के अनुसार की गई थी वह समाज सुधारक, उदार, धर्मात्मा, गणितज्ञ और ज्योतिष का जानकर था। उसने जयपुर, दिल्ली, उज्जैन, बनारस और मथुरा में बड़ी बड़ी वैद्यशालायें बनवाई। उसके समय में आमेर राज्य का बहुमुखी विकास हुआ। राजमहल, चन्द्रमहल, गोविन्द देव जी का मंदिर, जलमहल, नाहरगढ़, जयगढ़ आदि भव्य इमारतों व किलों और मंदिरों का निर्माण करवाया।

जयसिंह मुगलकाल का अति महत्वपूर्ण, प्रभावशाली, राजनीतिज्ञ सेनानायक और सर्वोत्कृष्ट उच्चाधिकारी था। उनकी मृत्यु के बाद मुगल दरबार में राजपूताने के शासकों का महत्व कम होता गया।

सवाई जयसिंह के बाद ईश्वर सिंह (1743 ई.) आमेर का शासक बनावह अपने पिता के समान चतुर और विद्वान नहीं था, किन्तु उसने अपने समयमें जयपुर में एक अष्टकोणीय सात मंजिली भव्य मीनार बनाई जो ईसरलाट या सरगासूली के नाम से विख्यात है।

ईश्वर सिंह के बाद सवाई प्रताप सिंह (1779–1803 ई.) शासक बना। उसने तूंगा के युद्ध में मराठज्ञें से युद्ध किया किन्तु हार गया। हार का मुख्य कारण पुरानी युद्ध पद्धति, पुराने अस्त्र शस्त्रा व अनुशासनहीनता। उसने हवामहल का निर्माण करवाया। हजारों जालियाँ और वृत्ताकार मेहराबों से सुशोभित यह बहुमंजिला पिरामिडनुमा महल हवामहल के नाम से प्रसिद्ध है। कला व साहित्य की उन्नति के लिए भी ये बहत प्रयत्नशील रहें।

दिल्ली में मुगल सत्ता के विघटन और राज्य में मराठाों के आगमन, हस्तक्षेप व छापों के कारण स्थिति अत्यधिक खराब हो गई थी। अतः 1803 ई. में प्रतापसिंह की मृत्यु के पश्चात् उसके उत्तराधिकारी जगतसिंह को अंग्रेजों का आश्रय लेने के लिए बाध्य होना पड़ा।

1818 ई. में अंग्रेजों के साथ जयपुर रियासत के शासकों ने संधि कर ब्रिटिश राज्य का संरक्षण स्वीकार कर लिया। जिससे जयपुर शासकों को पूर्ण सुरक्षा मिल गई और मराठों से होने वाले युद्ध का अंत हो गया।

जयपुर रियासत के महाराज रामसिंह (1835–80 ई.) और माधोसिंह द्वितीय (1880–1922) ब्रिटिश रेजीडेन्टों के परामर्श से शासन कार्य करन लगे सवाई रामसिंह ने रामनिवास बाग, महाराज स्कूल ऑफ आर्ट की स्थापना की और जयपुर नगर को गुलाबी रंग से पुतवाकर इसे गुलाबी नगरी बना दिया। जिसके परिणाम स्वरूप जयपुर शहर विश्व में पिंकसिटी के नाम से विख्यात हुआ। महाराजा माधोसिंह द्वितीय ने रामनिवास बाग में प्रिंस अल्वर्ट की स्मृति में अल्वर्ट हाल नामक सुन्दर व भव्य इमारत का निर्माया करवाया जो वर्तमान में संग्रहायल है। अंतिम राजा सवाई मानसिंह द्वितीय (1922–49

ई.) ने जयपुर के सौन्दर्यकरण में बहुत योगदान दिया। इनके शासनकाल में महाराजा कॉलेज, महारानी कॉलेज, सवाई मानसिंह अस्पताल, मोती डूंगरी पर तख्तेशाही महल का निर्माण हुआ। इसके जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटना जयपुर (1949 ई.) का अन्य देशी रियासतों की तरह राजस्थान में विलय हो जाना तथा महाराजा का राज्य प्रमुख पद प्राप्त कर लेना है। जयपुर इस नये प्रदेश की राजधानी बना।

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में आमेर के कछवाहा राज्य का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। इस वंश के शासकों ने पश्चिम में अफगानिस्तान से पूर्व में आसाम तक, उत्तर में बलख से लेकर दक्षिण में बीजापुर तक अपनी वीरता व शौर्य का परिचय दिया। इस वंश के पजवनराय कन्नौज की लड़ाई में सम्राट पृथ्वीराज के साथ थे। 16वीं सदी के पूर्वार्द्ध में कछवाहा शासक पृथ्वीराज (1503–1527) ने खानवा की लड़ाई में बाबर के विरूद्ध राणा सांगा का साथ दिया। आमेर के शासक मारमल ने मुगल सम्राट अकर से जो संबंध स्थापित किये वो मुगल शासन के अंत तक रहा। राजा भारमल, भगवानदास, मानसिंह ने मुगलों के कंधे से कंधा मिलाकर मुगल साम्राज्य निर्माण मेंमहत्वपूर्ण योगदान दिया।

मिर्जा राजा जयसिंह (1621–67 ई.) आमेर के सुसंस्कृत सभासद, अप्रितम योद्धा और लोकप्रिय शासक हुये।

सवाई जयसिंह (1700–43 ई.) ने जयपुर नगर को बसाया और सामाजिक सुधारों पर विशेष ध्यान दिया। अपनी विलक्षण बुद्धि से उन्होंने जयपुर राज्य को सुदृढ़ किया।

सवाई रामसिंह ने (1835–80 ई.) अपने राज्य को आधुनिक बनाने पर बल दिया तथा सामाजिक सुधारों और आधुनिक शिक्षा के प्रसार के लिए खुले हाथों से खूब धन खर्च किया। 1947 ई. में भारत को स्वतंत्राता मिली तो अन्य रियासतों के साथ जयपुर को मिलाकर राजस्थान राज्य का निर्माण हुआ तथा जयपुर इसकी राजधानी और तत्कालीन महाराजा सवाई मानसिंह द्वितीय राज्य के प्रथम राज प्रमुख बने।

संदर्भ

1. थर्टी डिसिव बैटल ऑफ जयपुर : रावल नरेन्द्र सिंह जोबनेर।
2. लिटरेरि ऑफ दा रूलर्स ऑफ अम्बोर एण्ड जयपुर, पृ. नं. 10 गोपाल नारायण बोहरा जयपुर।
3. नैणसी री ख्यात–भाग 1 पृ. 295 सं. श्री देवीसिंह मंडावा।
4. नाथावतों को इतिहास पृ. 20 लेखक पं. हनुमान शर्मा।
5. मुंशी देवी प्रसाद कृत ऐतिहासिक चरित्रा माल : पृ. 02 सं. मनोहर सिंह राणावत।
6. मुंशी देवी प्रसाद कृत आमेर के राजा पृ. 32–33
7. मुंशी देवी प्रसाद कृत आमेर राजा पृ. 38–39
8. गैरी शंकर हीराचंद ओझा–ओझा निबंध संग्रह भाग 3–4 पृ. 107
9. राजस्थान के इतिहास का सर्वेक्षर पृ. 28–35 जहूर खां मेहर
10. जयपुर राज्य का इतिहास : डॉ. (श्रीमती) चन्द्रमणि सिंह।
11. कछवाहों का इतिहास–जगदीश सिंह गहलोत।

(जयपुर अलवर राज्य का इतिहास)